Reg. No. V-27452 ISSN 0974 7222

PARISHEELAN

An International Research Journal

Vol-XI No.-3 & 4 Jul-Dec, 2015

Chief Editor
Dr. Anjani Kumar Mishra

Editors
Dr. Arachna Dubey
Dr. Sanjay Kumar
Dr. Preetesh Acharya

Published by
SURUCHI KALA SAMITI
B 23/45, Gha-A-S, Nai Bazar, Khojwan,
Varanasi, U.P. (INDIA) Mob: 9450016201

Scanned with CamScanner

अभिनवपञ्चतन्त्र

डॉ.ललित पटेल*

पञ्चतन्त्र अपने उद्भव काल में तो एक विशिष्ट कथाग्रन्थ मात्र रहा । परन्तु कालान्तर में यह एक प्रभावशाली कथा-विधा अथवा कथा शैली बन गया – पुराणों की ही तरह । शास्त्रादि के माध्यम से अविकसित बुद्धि कुमारों को पण्डित न बना सकने की ही स्थिति में महाप्रज्ञ आचार्य विष्णुशर्मा ने रोचक पशु-पक्षिकथाओं का आश्रय लिया । ये कथायें राजपुत्रों की बुद्धि, रुचि तथा ज्ञान-ग्रहण शक्ति तीनों के अनुकूल थी । इन कथाओं का मर्म उनकी समझ में आने लगा और वे शीघ्र ही मित्रप्राप्ति, मित्रभेद, काकोलूकीय आदि संदर्भों में पारंगत बन गये ।

अभिनवपञ्चतन्त्रम् नये विष्णु शर्मा अभिराजेन्द्र का अभिनव सारस्वत उच्छ्वास है । कथाकार ने प्राचीन वक्ता एवं श्रोता के ही माध्यम से पञ्चतन्त्र को थोड़ा और आगे बढ़ाया है । इसे इतिहास के गह्वर से निकाल कर, वर्तमान-समाज से जोड़ा है । अभिनवपञ्चतन्त्रम् की पन्द्रह कथायें उसे एकदम नया परिवेश प्रदान करती हैं ।

कथाऽनुक्रमः (मित्रसम्प्राप्तिः)

प्रथमा - काकमृगमैत्रीकथा

द्वितीय - कृतज्ञशल्लकीकथा

तृतीय - शाकविक्रेतृपुत्र कथा

चतुर्थी - अभिशप्तवानरीकथा

कथाऽनुक्रमः (मित्रभेदः)

पञ्चमी - निरञ्जनवञ्चनाकथा

षष्ठी - दुर्ह्रद्वणिक्कथा

सप्तमी - दस्युप्रणयकथा

कथाऽनुक्रमः (काकोलूकीयम्)

अष्टमी – उत्कोचकीटाधिकारिकथा

नवमी – नाकुलिकाऽहितुण्डिकथा

कथाऽनुक्रमः (लब्धप्रणाशः)

दशमी - तेंगनाननायककथा

एकादशी - वृद्धबलिनिवारणकथा

*श्रीसोमनाथ संस्कृत यूनिवर्सिटी, वेरावलम् गुजरातम्

Scanned with CamScanner

द्वादशी - मृतभूषोज्जीवनकथा

कथाऽनुक्रमः (अपरीक्षितकारकम्)

त्रयोदशी - सुरावायकथा

चतुर्दशी - भेकभुजङ्गकथा

पञ्चदशी - पितृवधिकवधकथा

द्राङ् न मैत्री विधातव्या भञ्जनीया न वा तथा ।

मणिकाञ्चनसंयोगा मुद्रिकैव हि शोभते ।।[1]

प्रस्तुत श्लोक में बताया गया है कि जल्दबाजी में दोस्ती नहीं करनी चाहिए और न ही जल्दबाजी में तोड़नी चाहिए । मित्रता तो वही अच्छी होती है जो मणि ओर काञ्चन के संयोग वाली मुद्रिका की तरह (चरित्र वाले) दो मित्रों से संवलित है ।

(1) मिष्टभाषी मिताकांक्षी मितव्ययो मिताक्षरः ।

त्रस्तशत्रुस्त्रपाशीलो मित्रसंज्ञोऽभिधीयते ।।[2]

मीठा बोलने वाला, सीमित इच्छा वाला, मितव्ययी, मितभाषी, शत्रुजनों को संत्रस्त कर देने वाला, सलज्ज व्यवहार वाला व्यक्ति ही मित्र नाम से जाना जाता है ।

(2) सुहृन्नोऽवाप्यतेऽभीष्टो यत्नजातैः शतैरपि ।

अकस्माल्लभ्यते सोऽपि दैवयोगादतर्कितम् ।।[3]

मन-चाहा मीत सैकड़ों प्रयत्न-समूह के बावजूद नहीं मिल पाता । परन्तु देवकृपा से ही मनोनुकूल मित्र अतर्कित रूप से अचानक ही प्राप्त हो जाता है ।

(3) पश्यन्तः पदचिह्नानि मूर्खा अग्रेसरन्ति च ।

कवि-सिंह-सुपुत्राश्च स्वयमध्वप्रवर्तकाः ।।[4]

मूर्ख लोग ही दूसरों के पाँवों का निशान देखते हुए आगे बढ़ते हैं । शायर, सिंह और सपूत तो अपना रास्ता खुद बनाते हैं ।

(4) साम्राज्येऽपि गते राज्ञस्तादृशं दारुणं भयम् ।

नो यथा कृपणस्यास्ते भिक्षान्नेऽपि समर्पिते ।[5]

राजपाट खो जाने पर भी राजा को वैसा दारुण भय नहीं होता जैसा कि कंजूस को होता है (भिखारी) को भीख देकर ।

(5) हृषीकेच्छाजातो विषयसुखभागो युवतिषु ।

लभेतालं तोषं तदपि जनिभाजां मतिमताम् ।

न सार्थक्यं लोके प्रभवतितरां जन्मनिलयं

Scanned with CamScanner

विना मित्रं हयेकं स्वजनचरमं मंगलकरम् ।।[6]

मतिमान् मनुष्यों का इन्द्रिय-प्रेरणा से समुत्पन्न विषयसुख का भोग युवतियों को प्राप्त कर भले ही कृतकृत्यता को प्राप्त हो जाय परन्तु पृथ्वी पर उनका जन्म लेना तो स्वजनों में सर्वश्रेष्ठ, मंगलकारी एक मित्र के बिना, सार्थकता को ही नहीं प्राप्त होता ।

(6) क्षीरायते जलं सद्यः तैलं नैव जलायते ।

समं समेन सम्बद्धं भवेन्नो विषमेण च ।। [7]

जल तो तत्काल (मिलते) ही दूध का रूप धारण कर लेता है परन्तु तेल जल का रूप धारण नहीं कर पाता (उससे अलग ही रहता है) समान, समान वस्तु से ही सम्बद्ध (एकाकार) हो पाती है तथा न कि (अपने से) असमान से ।

(7) नियन्त्र्यते नैव बलेन हस्ती न गृह्यते शक्तिचयेन सिंहः ।

अतो हि कल्याणनिषक्तचित्तैर्बुद्धयैव सर्वं खलु साधनीयम् ।।[8]

हाथी को बल के सहारे नियंत्रित नहीं किया जा सकता है और न ही शक्ति के जोर से शेर को पकड़ा जा सकता है । इसलिए कल्याण-भावना से संसक्त चित्तों द्वारा बुद्धि के ही सहारे सब कुछ सिद्ध करना चाहिए ।

(8) क्रोधान्धो न नरः पश्येदतीतं प्रेम नो भयम् ।

भावि, पश्येदसौ स्वीयं केवलं मनसो रयम् ।।[9]

जब मनुष्य क्रोध से अन्धा हो जाता है तो न उसे अतीत का प्रेम, न ही भविष्य का भय दीखता है । उसे तो बस, वर्तमान का मनोवेग ही दिखाई पड़ता है ।

(9) बुद्धयैव जीयते सर्व सर्वं बुद्धयैव भुज्यते ।

बुद्धिनाशेऽखिलं नष्टं तस्माद् बुद्धिर्विशिष्यते ।। [10]

सब कुछ बुद्धि से जीता जाता है, सब कुछ बुद्धि से ही प्राप्त किया जाता है । बुद्धि के नाश से सब कुछ नष्ट हो जाता है । इसलिए बुद्धि ही प्रधान है ।

(10) संकटे नो सखा बन्धुर्बुद्धिरेव सहायिनी ।

बुद्ध्या पौत्रेण सन्त्रातो मृत्युगर्भात् पितामहः ।।[11]

संकट वेला में बुद्धि ही हमारा मित्र है, सहायक है । बुद्धि के बल पर ही (बेचारा) वह पितामह पोते द्वारा मृत्यु के मुँह से बचा लिया गया ।

(11) अपरीक्ष्य कृतं कार्यं भवत्यात्मविनाशकम् ।

वायबद्धं यथा वैरं महामत्स्यसुराकृतम् ।।[12]

Scanned with CamScanner

विना विचारे किया हुआ कार्य अपना ही नाश करने वाला होता है । जैसे महामत्स्य सुरा के द्वारा वाय के प्रति बाँधा गया वैरभाव ।

(12) न श्रेयसे भवत्येव अपरीक्षितकारकम् ।

पुरोहितं तिरस्कृत्य यथाऽवाप नृपो भयम् ।।[13]

विना विचारे कोई काम करना कल्याणकारी नहीं होता है जैसे कि पुरोहित को (बिना विचारे) अपमानित कर राजा ने भय-संकट प्राप्त कर लिया था ।

अर्वाचीन काल में अभिनवपञ्चतन्त्र का संस्कृत बाल साहित्य में अभूतपूर्व योगदान है ।

(Footnotes)

1 अभिनवपञ्चतन्त्रम्, मित्रसम्प्राप्तिः, श्लोक 6, पृ.सं. 15

2 अभिनवपञ्चतन्त्रम्, मित्रसम्प्राप्तिः, अभिराजराजेन्द्र मिश्र, श्लोक 1, पृ.सं. 9

3 अभिनवपञ्चतन्त्रम्, मित्रसम्प्राप्तिः, अभिराजराजेन्द्र मिश्र, श्लोक 12, पृ.सं. 26

4 अभिनवपञ्चतन्त्रम्, मित्रभेद, अभिराजराजेन्द्र मिश्र, श्लोक 4, पृ.सं. 37

5 अभिनवपञ्चतन्त्रम्, मित्रभेद, अभिराजराजेन्द्र मिश्र, श्लोक 9, पृ.सं. 42

6 अभिनवपञ्चतन्त्रम्, मित्रभेद, अभिराजराजेन्द्र मिश्र, श्लोक 10, पृ.सं. 43

7 अभिनवपञ्चतन्त्रम्, मित्रभेद, अभिराजराजेन्द्र मिश्र, श्लोक 11, पृ.सं. 44

8 अभिनवपञ्चतन्त्रम्, काकोलूकियम्, अभिराजराजेन्द्र मिश्र, श्लोक 2, पृ.सं. 51

9 अभिनवपञ्चतन्त्रम्, काकोलूकियम्, अभिराजराजेन्द्र मिश्र, श्लोक 10, पृ.सं. 63

10 अभिनवपञ्चतन्त्रम्, लब्धप्रणाश, अभिराजराजेन्द्र मिश्र, श्लोक 2, पृ.सं. 64

11 अभिनवपञ्चतन्त्रम्, लब्धप्रणाश, अभिराजराजेन्द्र मिश्र, श्लोक 5, पृ.सं. 70

12 अभिनवपञ्चतन्त्रम्, अपरीक्षितकारकम्, अभिराजराजेन्द्र मिश्र, श्लोक 1, पृ.सं. 79

13 अभिनवपञ्चतन्त्रम्, अपरीक्षितकारकम्, अभिराजराजेन्द्र मिश्र, श्लोक 4, पृ.सं. 83

Scanned with CamScanner